Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
Volume-16, Issue-4, March-2023
www.researchguru.net

गांधीजी के शिक्षा विषयक सुझाव साम्प्रत परिप्रेक्ष्य में

डॉ. जगदीश भाई एच.पटेल

आसि. प्रोफेसर (संस्कृत विभाग) श्री के. आर. आँजणा आर्ट्स & कॉमर्स महाविध्यालय, धानेरा

अर्वाचीन विश्व संक्रमण काल से गुजर रहा है जिनमें पुरानी मान्यताएं समाप्त हो रही हैं या हो चुकी हैं और नयी मान्यताएँ सामने आ रही हैं । इन नयी मान्यताओं में भौतिक मूल्यों और अर्थ की प्रधानता है । नैतिक एवं आध्यत्मिक मूल्यों से लोगों का विश्वास उठ सा गया है, किन्तु समाज केवल भौतिक मूल्यों से चल नहीं सकता । इसलिए ऐसे मार्गों को खोजना आवश्यक है जिन पर चलकर मनुष्य वास्तविक शान्ति प्राप्त कर सके । आधुनिक युग में गाँधीजी ने भारतीय संस्कृति पर आधारित मान्यताओं को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया । जिस सत्य तथा अहिंसा का प्रयोग वे जीवन भर करते रहे उसका अन्तिम प्रयोग उन्होंने 30 जनवरी 1948 को अपने प्राणों की आहुति देकर किया । कंवरलाल ने अपनी पुस्तक 'गुड बाई मिस्टर गाँधी' में इसे अन्तिम प्रयोग की संज्ञा दी है।

जिस व्यक्ति ने समस्त विश्व को प्रकाश दिया, जिसकी तुलना ईसा और बुद्ध से की जाती है (प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका पर्ल एस बक ने गाँधीजी की हत्या को ईसा की सूली की संज्ञा दी थी), उनके विचारों का अध्ययन करना देश की वर्तमान पीढ़ी के लिए, भावी पीढ़ियों के लिए भी आवश्यक है क्योंकि जो विचार और चिन्तन एवं कर्मयोग गाँधीजी ने दिया वह शाश्वत है और उसको निरन्तर दोहराते रहना मानव समाज के लिए सदैव श्रेयस्कर रहेगा।

गाँधीजी के व्यक्तित्व की महानता की बात तो अलग है। आज की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियाँ ही ऐसी है, जिनके कारण मनुष्य विनाश के कगार की ओर अग्रसर हो रहा है। समाज में स्नेहपूर्ण बन्धन समाप्त हो रहे हैं, राजनीतिक जीवन में त्याग और तपस्या तथा बलिदान के स्थान पर भ्रष्टाचार व्याप्त है।

गाँधीजी के शिक्षा दर्शन को नये संदर्भों में देखना आवश्यक है। एक तो यह कि आज के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी तथा नैतिक जीवन में संदर्भ में उसकी क्या उपयोगिता है और दूसरा यह कि आज शिक्षा के क्षेत्र में जो मुख्य प्रश्न है उनके सम्बन्ध में गाँधीजी के शिक्षा दर्शन का क्या महत्व है और क्या उनका समाधान गाँधीजी के शिक्षा दर्शन के आधार पर प्राप्त करना संभव है।

1. सामाजिक सन्दर्भ

गाँधी के शिक्षा दर्शन में सर्वोदय का सबसे अधिक महत्व है। उनका सम्पूर्ण जीवन अस्पृश्यों का समान महत्व देने में बीता। अस्पृश्यता निवारण उनके रचनात्मक कार्यक्रमों का प्रमुख अंग था। किन्तु देश ने उनके विचारों की उपेक्षा की और आज

समाज के विघटन का विकराल स्वरूप सामने है। बड़े पैमाने पर हरिजन अपना धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। जिसका मूल आधार सामाजिक असमानता और न्याय पर आधारित है, आज की बड़ी भारी आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति उद्योग पर आधारित शिक्षा से ही हो सकती है क्योंकि उसमें शारीरिक श्रम का महत्व अत्यधिक है। सभी प्रकार के कार्यों को समान दृष्टि से देखने का सिद्धान्त गाँधीजी ने प्रतिपादित किया था, यही सामाजिक समानता का मूलाधार है।

2. आर्थिक सन्दर्भ

देश में आज दो प्रकार के विचार के लोग प्रमुख है एक तो वे जो औद्योगिक विकास को आर्थिक विकास मानते है मशीनरी का प्रयोग, आवश्यकता से अधिक उत्पादन, दूसरे देशों का शोषण इनके चिन्तन के मुख्य स्तम्भ हैं और दूसरी ओर ये हैं जो औद्योगिक विकास के साथ-साथ मानवीय मूल्यों को महत्व देते हैं। मशीनरी का प्रयोग कम से कम करना चाहते हैं और विकास को आवश्यकताओं की वृद्धि की नहीं, प्रत्युत आवश्यकताओं की कमी की प्रक्रिया मानते हैं।

एलविन टाफलर ने अपनी पुस्तक 'द थर्ड वेव' में वह भलीभांति स्पष्ट कर दिया है कि औद्योगीकरण ने समाज को एक ऐसे बिन्दु पर लाकर खड़ा कर दिया है जहाँ उसके विनाश की सम्भावनाएँ अधिक हो गयी हैं और कुछ ऐसा समाधान आवश्यक है जिसमें जीवन सरल और विकेन्द्रित हो।

आर्थिक सन्दर्भ से एक प्रश्न और जुड़ा हुआ है और उसमें भी विचारक दो शिविरों में विभाजित है अर्थात् एक वह शिविर है जिसमें घरेलू उद्योग धन्धों का आर्थिक विकास में महत्व नहीं माना जाता और दूसरा वह शिविर है जो मशीन की संस्कृति में भी घरेलू उद्योग-धन्धों को महत्वपूर्ण समझता है।

गाँधीजी घरेलू धन्धों के पक्ष में थे। इसीलिए उन्होंने देहाती बुनियादी दस्तकारी के माध्यम से शिक्षा देने की बात कही थी। यद्यपि बड़े-बड़े कारखानों से उत्पादन अधिक हो सकता है किन्तु इनके लिए बड़ी पूँजी की भी आवश्यकता होती है। इसलिए कुछ क्षेत्रों में इनका प्रयोग संभवतः अनिवार्य हो किन्तु सामान्य रूप से एक विकासशील अथवा गरीब देश के लिए घरेलू उद्योग-धन्धों की बड़ी आवश्यकता है। इसमें बेरोजगारी की समस्या का समाधान होता है| क्योंकि जहाँ घरेलू उद्योग धन्धों में 25000 व्यक्तियों को काम मिल सकता है वहाँ बड़े कारखानों में केवल एक हजार व्यक्तियों को काम मिलेगा। फिर स्थानीय साधनों का अच्छा उपयोग घरेलू उद्योग धन्धों में विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त निहित है।

वास्तविक बात यह है कि आज का आर्थिक विकास युद्धोन्मुख है, इसलिए समाज में दो वर्ग हो जाते हैं एक वह जो शारीरिक श्रम करता है और दूसरा वह जो बौद्धिक कार्य करता है। बौद्धिक कार्य करने वाले शारीरिक श्रम करने वालों को नीचा समझते हैं। हाथ के उद्योग द्वारा शिक्षा

देने से सामाजिक समानता, समभाव आएगा। इसके अतिरिक्त बुनियादी दस्ताकारियों का लोकजीवन से गहरा सम्बन्ध होता होता है।

युगों की उथल-पुथल के बाद भी ये दस्तकारियाँ जीवन से जुड़ी रहती है। इनके साथ देश की संस्कृति संबद्ध है। इसलिए गाँधीजी का यह विचार था कि जिस किसी भी प्रकार की क्रिया से शैक्षिक लाभ नहीं होता किन्तु बुनियादी दस्तकारियों के द्वारा जो शिक्षा दी जाती है उसे बालक समझता है, उनकी विभिन्न प्रक्रियाओं को वह स्वाभाविक ढंग से सीखता है | वास्तव में बच्चों की रूचि भी मशीनरी के खिलौनों में नहीं होती। वे गाड़ी खींचने, गाड़ी धकेलने पैर से साइकिल चलाने में अधिक रूचि लेते हैं, न कि मशीन के खिलौनों में |

बुनियादी दस्तकारियों द्वारा शिक्षा देने का गाँधी जी का उद्देश्य यह भी था कि बच्चा आठ वर्ष की शिक्षा समाप्त करके स्वावलम्बी बन सके। वे सरकारी नौकरियों को शिक्षा का लक्ष्य नहीं मानते थे। बुनियादी दस्तकारियों से बेरोजगारी की समस्या का हल भी निकलता है। शिक्षा को रोजगार, उद्योग और स्वावलम्बन से सम्बद्ध करने के खतरों से वर्धा सम्मेलन में ही गाँधीजी को लोगों ने चेतावनी दी थी किन्तु गाँधीजी ने उनका समाधान भी किया। वास्तव में कोठारी कमीशन ने भी स्वावलम्बन और क्रिया के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। किन्तु उनको विदेशी शब्दों से अधिक प्रेम था इसलिए 'वर्क एक्सपीरियन्स' के नाम से स्वावलम्बन चालू करने का प्रस्ताव किया गया।

ईश्वरभाई पटेल कमेटी ने उसे समाजोपयोगी उत्पादक क्रिया का नाम दिया[1] और +2 स्तर पर लिए एक व्यवसायीकरण की योजना रखी।[2] इसलिए यह तो प्रश्न ही नहीं उठाना चाहिए कि उद्योग द्वारा शिक्षा अप्रासंगिक है। हाँ, गाँधीजी की संकल्पना और 'वर्क एक्सपीरियन्स' में जमीन आसमान का अन्तर है जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। उद्योग द्वारा शिक्षा से सम्बन्धित दूसरा प्रश्न आत्मनिर्भरता का है। यदि उद्योग के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करके विद्यार्थी आत्मनिर्भर न बनें तो उस प्रक्रिया का कोई अर्थ नहीं होता।

इसके अतिरिक्त शिक्षा का खर्च इतना बढ़ रहा है कि कोई भी सरकार निरन्तर बढ़ते हुए खर्च के बोझ को संभाल नहीं सकती।

3. राजनीति संदर्भ

आज देश में शासन तन्त्र एवं पूरी सत्ता केन्द्र में पूंजीभूत है। मूल संविधान में शिक्षा को राज्य का विषय माना गया है।[3] किन्तु आपातकालीन स्थिति में सविधान में संशोधन करके उसे समवर्ती सूची में लाया गया। समवर्ती सूची से यह भ्रम होता है कि राज्य सरकारों के हाथ में भी कुछ शक्ति है और कुछ केन्द्रीय सरकार के हाथ में किन्तु व्यवहार में अब सब कुछ केन्द्र से ही नियन्त्रित होता है। प्राइमरी कक्षाओं में देश के विभिन्न राज्यों में क्या पाठ्यक्रम होगा यह भी केन्द्रीय सरकार या उसके अधीन केन्द्रीय संस्था द्वारा तय किया जाता है। नेशनल काउंसिल आफ एजूकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग, नई दिल्ली की स्थापना एक

स्वायत्तशासी संस्था के रूप में की गई थी, किन्तु वास्तव में वह केन्द्रीय सरकार का ही एक अंग बन गयी है और उसी के संकेतों और निर्देशों पर कार्य करती हैं | एन०सी०ई०आर०टी० न केवल पाठ्यक्रम तैयार करती है, प्रत्युत पाठ्यपुस्तकें भी तैयार करती है।

माध्यमिक स्तर पर 10+2 की योजना देश भर के लिए लागू की गई[4] जिसके पीछे यह दर्शन है कि पूरे देश में एकरूप पाठ्यक्रम हो उसके लिए पाठ्यपुस्तकें भी तैयार की गयी है। उनकी बड़ी आलोचनाएं हुई, विशेष रूप से एकरूपता, वर्क एक्सपीरियन्स दस वर्षीय पाठ्यक्रम विषयों और सरकार ने उसमें संशोधन करने के लिए ईश्वरभाई पटेल समिति बनाई जिसमें वर्क एक्सपीरियन्स के स्थान पर समाजोपयोगी और उत्पादक कार्य को स्थान दिया गया।[5] विषयों में थोड़ी बहुत कमी की गयी। किन्तु वास्तव में पूरी योजना विदेशी संकल्पनाओं पर आधारित है और ऐसे लोग शिक्षा योजना के चिंतन में प्रभावशाली रहे हैं, जिनको अपने देश की आवश्यकताओं की न तो कोई जानकारी है और न शिक्षण की कला से ही आवश्यक परिचयन है।

एन0सी0ई0आर0टी0 पाठ्यक्रमीय योजना को जो स्वरूप प्रकाशित है उसको पढ़ने से यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है माड्यूल्स, सीमेस्टर, ग्रेडिंग आदि ऐसे शब्दों का प्रयोग विदेशी प्रभाव का पर्याप्त परिचय देता है। गाँधी जी ने बार-बार कहा था कि देश को पाश्चात्य दुष्प्रभावों से बचना चाहिये।

उच्च शिक्षा का जहाँ तक सम्बन्ध है कुलपतियों का जो सम्मेलन 30 मई, 1981 को हुआ उसमें यू0जी0सी0 के तत्कालीन अध्यक्ष ने जो भाषण दिया उससे यह स्पष्ट है। कि विदेशी विचारों का कितना प्रभाव है।

'Many universities, with the introduction of the new structure of the education system 10+2+3, took the opportunity to restructure their curricular contents for undergraduate courses. Harvard University, in 1978, made a very important academic exercise as to what should be the shape of the curriculum for the award of the first degree.'[6]

इस भाषण में आगे शिक्षा का पाठ्यक्रम क्या हो? इसमें हारवर्ड विश्वविद्यालय से सीख ली गयी | जैसे अपने देश में अपने विश्वविद्यालयों की आवश्यकता को समझने वालों की कमी हो। इसी भाषण में आलिवर वेंडेल होम्स की क्रियेटिव थिंकिंग के बारे में परिभाषा दी गयी है। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि गाँधी जी के विचारों का और उपनिषदों के विचारों का पूरे भाषण में कहीं उल्लेख नहीं है।

प्राइमरी तथा माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में तो केन्द्रीय हस्तक्षेप की बात पहले बतायी जा चुकी है। विश्वविद्यालयों के लिए भी एकरूप पाठ्यक्रम की बात चलायी जाती है। यू0जी0सी0 भी स्वायत्ताशासी संस्था है किन्तु उस पर भी केन्द्रीय स्वतन्त्रता का अपहरण करने के लिए कटिबद्ध रहती है। केन्द्रीय सरकार ने केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय में एक कोआर्डिनेशन बोर्ड बनाकर स्थिति और भी

खराब कर दी है। यहाँ उल्लेखनीय है कि पूंजीवादी देश अमेरिका ने फेडरल शिक्षा विभाग को समाप्त कर दिया था, यह कहकर कि शिक्षा स्थानीय संगठनों एवं संस्थाओं का विषय है। फेडरल शासन को उसमें नहीं पड़ना चाहिये।[7] (यह निर्णय क्रियान्वित हो सका) ।

गांधीजी का यह विचार भी शिक्षा के बारे में था कि केन्द्र स्तरीय समान पाठ्यक्रम निर्धारण किया जाए | केंद्रीय नियन्त्रण रहने से पाठ्यक्रम में एकरूपता रहेगी इससे शिक्षा का सच्चे और सार्थक अर्थ में दी जा सकती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि बालक का ज्ञान स्थानीय सीमाओं में बांध दिया जाएगा। इसका अर्थ केवल यह है कि माध्यम सार एकरूप अथवा समान रखा जा सक। इसके विरोध में पहली बात तो यह है कि देश बहुत बड़ा है और इसके विभिन्न अंचलों में न केवल भौगोलिक विभिन्नताएं भी है-उनकी भाषा, उनकी ऐतिहासिक परम्पराएं उनका प्राकृतिक परिवेश आदि इतना भिन्न है कि एकरूप पाठ्यक्रम चलाना या एक ही प्रकार की शिक्षा देना शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के सर्वथा प्रतिकूल है।

शिक्षा स्थानीय वातावरण के माध्यम से ही सार्थक दी जा सकती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि बालक का ज्ञान स्थानीय सीमाओं में बांध दिया जाएगा। इसका अर्थ केवल यह है कि माध्यम स्थानीय भाषा होगा और उसी के आधार पर गणित, विज्ञान, इतिहास आदि की शिक्षा दी जाएगी। यदि देश भर के पाठ्यक्रम को केन्द्रीय नियन्त्रण में रखा जाएगा तो इससे बहुत से खतरे उत्पन्न हो सकते हैं और हुए हैं। पहला तो यह है कि इससे देश के विघटन की संभावनाएं बढ़ती है अर्थात् विभिन्न प्रदेशों को यह आशंका होती है कि उनके अधिकारों, उनकी सीमाओं, उनकी संस्कृति उनकी भाषा आदि में हस्तक्षेप किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि बालक को यांत्रिक न बनाकर उसे प्रयोगात्मक बनाए | उससे बालक की बौद्धिक शक्ति भी विक्सित होगी|[8]

4. नैतिक संदर्भ

आज जीवन में नैतिक मूल्यों का सर्वथा अभाव हो गया है। मूलतः यह भौतिकवादी दर्शन का परिणाम है। जीवन में अर्थ को सर्वोपरि प्रधानता दी जा रही है। मूल्यहीनता अति- औद्योगीकरण के कारण भी होती है जिसमें मनुष्य निरन्तर तनावपूर्ण असम्बद्ध और अलगाव का जीवन व्यतीत करता है। उसका न तो परिवार से सम्बन्ध रह जाता है और न पास पड़ोस से वह यन्त्रवत् काम करता है। बच्चों को भी माता-पिता, भाई-बहन आदि का प्रेम नहीं प्राप्त होता। अतः उनका जीवन ममता-विहीन हो जाता है और एक भयंकर भावनात्मक और रागात्मक निर्धनता से समृद्ध होते हुए भी वे ग्रस्त हो जाते हैं।

इस प्रकार नई पीढ़ी असामान्य, असामाजिक व्यवहारों की ओर प्रवृत्त हो रही है और यह कोई केवल अपने देश की समस्या नहीं है अपितु पूरे विश्व की समस्या है। नैतिक मूल्यों की स्थापना जीवन को सरल बनाकर, अर्थ को सर्वोपरि न मानकर,

सत्य और अहिंसा पर आधारित शिक्षा द्वारा ही हो सकती है।

अन्त में सबसे महत्वपूर्ण सन्दर्भ यह है कि आज विश्व में युद्ध के बादल मंडरा रहे हैं। यहाँ तक कि अणु-युद्ध की संभावनाएं बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में क्या शान्ति का मार्ग खोजने का प्रयास नहीं होगा? क्या शोषण से, जो युद्ध का आधार है, समाज को मुक्त करने की कोशिश नहीं होगी। बहुधा यह कहा जाता है कि गाँधी जी के विचारों की आज के सन्दर्भ में कोई उपयोगिता नहीं है। किन्तु ऐसा वही कहते हैं जिन्होंने गाँधी जी को समझने की कोशिश नहीं की है।

भारतीय संस्कृति के आदि काल से लेकर अब तक की श्रृंखला में गाँधी जी एक महत्वपूर्ण कड़ी है। और जब तक भारतीय संस्कृति की मूल धाराएं प्रवाहित होती रहेगी, गाँधी के विचार देश का ही नहीं विश्व का मार्गदर्शन करते रहेंगे। यूनेस्कों सिम्पोजियम (पेरिस, 14-17 अक्टूबर, 1969) में रेने मैहू, डायरेक्टर जनरल यूनेस्को का निम्नलिखित वक्तव्य उल्लेखनीय है ।

"Thus, however, out of touch with contemporary problems particularly those of the developing countries - his method may appear to be in some respects, Gandhi remains invincibly present in our most decisive actions and our most serious thoughts, to remind us that history is always concerned solely with man - that is to say, with justice and that there can be no justice without mutual confidence and respect."[9]

-: संदर्भ सूचि :-

1 ईश्वर भाई पटेल कमेटी रिपोर्ट, 1977

2 आदि सेशिया कमिटी रिपोर्ट, 1978

3 लिस्ट थ्री,आइटम 25,कान्सटीश्च्युशन आफ इण्डिया, ईस्टर्न बुक कम्पनी लखनऊ, पृ.-20 |

4 करीक्यूलम फार द टेन-ईयर स्कूल -ए फ्रेम वर्क, एन. सी. ई.आर. टी., नई दिल्ली, 1975|

5 रिपोर्ट आफ द रिव्यू कमेटी आन द करिक्यूलम फार द टेन | ईयर स्कूल, 1971|

6 वाइस चान्सलर्स कान्फ्रेन्स, ३० मई, 1965 |

7 इन्डियन एक्सप्रेस, रविवार, २७ सितम्बर, 1981 |

8 गाँधी, मो. क. बालपोथी, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, (पुस्तक का बेक पेज), १९५२|

9 महादेवन् टी0 के0 (सम्पादक), टुथ एण्ड नान वायोलेंस, रिपोर्ट आफ द यूनेस्को सिम्पोजियम आन ट्रुथ एण्ड नान वायोलेंस इन गांधीज ह्यू मैनिज़्म, पेरिस, 14-17 अक्टूबर, 1969, पृ0 25-26 |